जनसत्ता

25 दिसंबर, 2019

खतरे की घंटी

साल के आखिरी हफ्ते में भारत की अर्थव्यवस्था को लेकर एक बार फिर खतरे की घंटी बजी है। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आइएमएफ) ने सोमवार को जारी रिपोर्ट में साफ-साफ कहा है कि भारत की अर्थव्यवस्था में इस वक्त मंदी का जो माहौल है, वह किसी गंभीर संकट से कम नहीं है और मंदी से उबरने के लिए सरकार को तत्काल नीतिगत कदम उठाने की जरूरत है। आइएमएफ की यह चेतावनी अर्थव्यवस्था के मोर्चे पर भारत की विफलता को बताने के लिए पर्याप्त है। भारत की अर्थव्यवस्था में मंदी की शुरुआत साल भर पहले हो चुकी थी। लेकिन उस वक्त सरकार मंदी की बात को खारिज करती रही और स्थिति बिगड़ती चली गई। अब विश्व बैंक सहित दुनिया की बड़ी रेटिंग एजंसियां और यहां तक कि भारत के रिजर्व बैंक ने भी आर्थिक वृद्धि में गिरावट के जो अनुमान व्यक्त किए हैं, वे इस बात का स्पष्ट प्रमाण हैं कि अर्थव्यवस्था में भारी मंदी है और इससे भी ज्यादा चिंताजनक बात यह है कि हाल-फिलहाल इसमें सुधार की कोई उम्मीद नहीं है। इस संकट से निकलने के सरकार को नीतिगत स्तर पर जो काम करना चाहिए, उसका अभी अभाव दिख रहा है। आइएमएफ की चिंता भी इसी को लेकर है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में मंदी के कारण जो भी रहे हों, उनके समाधान अगर वक्त रहते होते रहते तो आज हालात गंभीर नहीं होते। मंदी के जो चक्रीय कारण होते हैं, उनसे निपटना कहीं आसान होता है, लेकिन भारत में समस्याएं सुलझने के बजाय ज्यादा उलझती जा रही हैं। इसीलिए आइएमएफ ने वित्तीय क्षेत्र के सुधार पर टिप्पणी करते हुए कहा है कि जिस रफ्तार से वित्तीय क्षेत्र में सुधार के बारे में सोचा रहा था, वह उतना तेज हो नहीं पाएगा। इसका मतलब साफ है कि वित्तीय क्षेत्र की हालत सबसे खराब है। सरकारी बैंक एनपीए की समस्या से जूझ रहे हैं। बैंकों को संकट से निकालने के लिए सरकार ने पिछले कुछ सालों में भारी-भरकम पैकेज भी दिए, लेकिन आज भी बैंक लड़खड़ाए हुए हैं। वित्तीय संस्थानों में हुए बड़े घोटालों ने भी अर्थव्यवस्था पर चोट की है। आइएलएंडएफएस के एक लाख करोड़ से ज्यादा घोटाले, पीएमसी, घोटाले, दीवान हाउसिंग फाइनेंस जैसी कंपनियों के हजारों करोड़ के घोटाले बता रहे हैं कि बैंकिंग क्षेत्र के बाद गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनी क्षेत्र भी अर्थव्यवस्था के लिए बड़ा सरदर्द बन गया है। इन सबका असर यह हुआ है कि बैंक और वित्तीय संस्थानों ने उद्योगों को कर्ज देने से हाथ खींचने शुरू कर दिए हैं। इसलिए छोटे-बड़े उद्योगों में मंदी छाई हुई है।

इस वक्त बड़ी चुनौती बचत, खपत और निवेश के असंतुलन को दूर करने की है। मंदी की मार से त्रस्त ज्यादातर उद्योगों में नौकरियां नहीं हैं और लाखों लोग बिना रोजगार के बैठे हैं। ऐसे में सरकार मांग और उत्पादन बढ़ाने पर जोर देने की बात कर रही है। प्रश्न इस बात का है कि लोगों के पास जब काम नहीं होगा तो खर्च करने को पैसा कहां से आएगा और कैसे बाजार में मांग बनेगी? जब मांग नहीं होगी तो फैक्ट्रियां और कारखाने बनाएंगे क्या? जब औद्योगिक गतिविधियां सुस्त होंगी तो कैसे विकास दर बढ़ेगी? अर्थव्यवस्था की सुस्ती का सबसे बुरा असर तो यह पड़ा है कि राजकोषीय घाटा बढ़ता जा रहा है। विदेश व्यापार चौपट हालत में है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था का जिस तरह बंटाधार हुआ है, उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। सरकार बार-बार यह दावा रही है कि अर्थव्यवस्था की बुनियाद मजबूत है। पर सवाल है कि फिर क्यों नहीं हम मंदी मार से उबर पा रहे?

हादसों की सड़क

सड़कों पर दुर्घटनाएं और उसमें होने वाली मौतें चिंता के नए विषय नहीं हैं। लेकिन इस चिंता के मद्देनजर समस्या से निपटने के लिए क्या ठोस पहलकदमी हुई, इसकी सच्चाई हर कुछ समय बाद आती रहती है। स्वास्थ्य पत्रिका लांसेट में सोमवार को प्रकाशित एक ताजा अध्ययन के मुताबिक भारत में 2017 में हुए सड़क हादसों में करीब सवा दो लाख लोगों की मौत हुई। इसके अलावा देश भर में पंद्रह से लेकर उनचालीस साल के बीच की उम्र के लोगों की समय से पहले मौत की सबसे मुख्य वजह के रूप में सड़क दुर्घटना को दर्ज किया गया है। यह तथ्य अपने आप में बताने के लिए काफी है कि अलग-अलग वजहों से होने वाले सड़क हादसों में मरने वालों और इससे जुड़ी व्यापक समस्या को लेकर सरकार की रीति-नीतियां किस कदर उदासीनता की शिकार हैं। इतनी बड़ी तादाद में होने वाले हादसों से न केवल बहुत सारे परिवार टूट जाते हैं, उनके विकास पर उल्टा असर पड़ता है, सामाजिक नतीजे त्रासद रूप से प्रभावित होते हैं, बल्कि देश की अर्थव्यवस्था को भी भारी नुकसान पहुंचता है। सवाल है कि इतने बड़े पैमाने पर होने वाली जन-क्षति को क्या एक गंभीर समस्या के रूप में दर्ज नहीं किया जाना चाहिए?

लांसेट की इस रिपोर्ट में दर्ज यह तथ्य चिंताजनक है कि इन हादसों में मरने वालों में आधे से ज्यादा लोग पैदल यात्री और मोटरसाइकिल सवार थे। यह आंकड़ा वैश्विक औसत से भी अधिक है। सलीकों की बात करें तो यह माना जाता है कि सड़क पर पैदल यात्रा करने वालों का पहला हक होता है। कई देशों में यह यातायात की संस्कृति बन चुकी है कि अगर कोई पैदल सफर कर रहा व्यक्ति सड़क पार करने की कोशिश में होता है तो वाहन चालक गाड़ी को रोक लेते हैं। लेकिन हमारे यहां अगर इतनी बड़ी तादाद में पैदल चलने वाले दुर्घटनाओं के शिकार हो रहे हैं, तो यह सोचने की बात है कि क्या इसके लिए केवल पीड़ित जिम्मेदार है या फिर सड़क निर्माण, ढांचे और यातायात के कायदों में कोई ऐसी कमी है कि उसमें पैदल यात्रियों को गैर-महत्त्वपूर्ण माना जाता है! क्या सामान्य से लेकर व्यस्त सड़कों तक पर पैदल यात्रियों या दोपहिया वाहनों के लिए विशेष व्यवस्था नहीं हो सकती है? लेकिन इसके उलट कई जगहों पर यह देखा जा सकता है कि पैदल चलने के लिए सड़कों के किनारे बने फुटपाथ की जगहों को वाहनों की पार्किंग के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है। यह किस तरह की यातायात नीति है?

सही है कि सड़कों पर होने वाले हादसों के लिए मुख्य रूप से यातायात नियमों से लेकर उनके पालन में लापरवाही सबसे बड़ा कारक है। लेकिन क्या सुव्यस्थित सड़कों के लिए जरूरी बुनियादी ढांचे के मामले में भी कमी नहीं दिखती है? सड़कें मानव संसाधनों के बेहतर उपयोग और आर्थिक विकास का एक सबसे महत्त्वपूर्ण साधन रही हैं। लेकिन यही सड़कें अगर व्यापक स्तर पर मानव संसाधनों की क्षति की वजह बन रही हैं तो क्या सोचने की जरूरत नहीं है कि क्या इनके निर्माण में वैज्ञानिक पद्धति के लिहाज से कोई कमी है या फिर क्या उनमें कोई सुधार की जरूरत है! विडंबना यह है कि हर थोड़े अंतराल पर आने वाले अध्ययनों और रिपोर्टों में यह बताया जाता है कि इस तरह के हादसों की प्रकृति क्या है, उनकी वजहें क्या हैं, उनसे निपटने के रास्ते क्या हैं, लेकिन यह समझना मुश्किल है कि इतनी गंभीर समस्या के प्रति सरकारों की अनदेखी की वजह क्या हो सकती है! आखिर हर साल लाखों लोगों के नाहक ही जान गंवाने के मसले के प्रति इस स्तर तक उदासीन कैसे रहा जा सकता है?

कल्पमेधा

झूठ बोलना तलवार के घाव की तरह है। घाव तो भर जाएगा, लेकिन उसका निशान हमेशा बना रहेगा।

– शेख सादी

नागरिकता का सवाल और संकट

जाहिद खान

असम की मिसाल सबके सामने है। एनआरसी को लेकर पिछले पांच साल में राज्य में जो अफरा-तफरी मची, उसने सभी को परेशान करके रख दिया। अपने आप को भारतीय साबित करने के लिए लोगों को क्या-क्या जतन नहीं करने पड़ रहे? राज्य की पूरी प्रशासनिक मशीनरी इस कवायद में उलझी रही। इतना समय और अरबों रुपए खर्च करने के बाद जब अंतिम मसौदा सामने आया, तो उसमें लाखों वास्तविक भारतीय इस सूची से बाहर हो गए।

पूर्वोत्तर राज्यों से लेकर सारे देश में एनआरसी यानी राष्ट्रीय नागरिकता रजिस्टर और नागरिकता (संशोधन) कानून, 2019 का विरोध हो रहा है। विरोध की आग चारों तरफ फैल गई है। लोग बिना किसी राजनीतिक दल के नेतृत्व में स्वतः स्फूर्त इन कानूनों के खिलाफ आंदोलन में शामिल हो रहे हैं। सरकार, देश के नागरिकों की चिंताओं और मांग को सहानुभूति से देखती-सुनती-समझती, इसके उलट वह उनके दमन पर उतर आई है। चारों तरफ अव्यवस्था, अराजकता और डर का माहौल है। नागरिकता बिल को संविधान के खिलाफ बताते हुए सुप्रीम कोर्ट में कई याचिकाएं भी दायर की गई हैं। केरल, पंजाब, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश की सरकारों ने तो अपने यहां नागरिकता संशोधन कानून लागू करने से मना कर दिया है।

सरकार के संसद में इस आश्वासन कि उन राज्यों में नागरिकता संशोधन विधेयक लागू नहीं होगा, जो इनर लाइन परमिट या छठी अनुसूची के दायरे में आते हैं के बावजूद आंदोलनकारियों पर कोई असर नहीं हुआ है। मालूम हो कि छठी अनुसूची जनजातीय परिषदों को ज्यादा स्वायत्तता देती है। नया प्रावधान पूर्वोत्तर के आदिवासी इलाकों में लागू नहीं होगा। असम के कुछ ही जिलों में छठी अनुसूची लागू है। चूंकि असम इनर लाइन परमिट वाला राज्य नहीं है, इसलिए यह पूर्वोत्तर का अकेला ऐसा राज्य बन जाएगा, जहां बांग्लादेश से आए अवैध हिंदू शरणार्थी बसाए जा सकेंगे। यही वजह है कि असम में ही इस कानून का सबसे ज्यादा विरोध है। पूर्वोत्तर के सभी राज्यों सहित असमिया लोगों की मूल समस्या बांग्लादेशियों के बढ़ते सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक प्रभुत्व की है। उनका डर है कि नागरिकता संशोधन कानून के अमल में आने के बाद उनकी जमीन, भाषा, पहचान और रोजगार पर संकट आ जाएगा। पूर्वोत्तर के सात राज्यों में दो सौ अड़तीस मूल जनजातियां ऐसी हैं, जो आस्था से हिंदू नहीं हैं, लेकिन बाहरी लोगों को यहां बसाने की किसी भी कोशिश के खिलाफ हैं। वे बांग्लादेशी घुसपैठियों को धर्म और भाषा के आधार पर अलग नहीं करते। असमिया लोगों की नजर में सारे बांग्लादेशी उनका हक मार रहे हैं। यही वजह है कि वे सभी से एक समान नफरत करते हैं। इन राज्यों में अवैध अप्रवासियों के खिलाफ हिंसा में सिर्फ बांग्लादेशी मुसलमान ही नहीं मारे गए हैं, बल्कि बांग्लादेशी हिंदू या बांग्लाभाषी हिंदू भी इसका शिकार हुए हैं।

15 अगस्त, 1985 को तत्कालीन केंद्र, राज्य सरकार और ऑल असम स्टूडेंट यूनियन (आसू) तीनों के बीच जो असम समझौता हुआ था, उसमें सहमति बनी थी कि 1971 से पहले जो लोग असम में आ गए हैं, उन्हें नागरिकता दी जा सकती है। समझौता स्पष्ट तौर पर कहता है कि 24 मार्च, 1971 के बाद आए सभी अवैध प्रवासियों को वापस भेजा जाएगा। असम समझौते की मूल भावना को देखते हुए ही राज्य में एनआरसी अमल में आया। एनआरसी का मकसद भारतीय नागरिकों और बांग्लादेशी घुसपैठियों की पहचान करना था। बहरहाल एनआरसी का जब अंतिम मसौदा सामने आया, तो उसमें उन्नीस लाख लोग ऐसे निकले, जो अपने आप को भारतीय साबित नहीं कर पाए। इनमें भी तेरह लाख लोग गैर मुसलमान यानी हिंदू और अन्य आदिवासी समुदाय के लोग थे। इनमें पांच लाख चालीस हजार बांग्लादेशी हिंदू हैं। असम हो या पश्चिम बंगाल, ये हिंदू प्रवासी ही भाजपा के बड़े वोट बैंक हैं। इन्हीं के वोटों के सहारे पार्टी असम और पश्चिम बंगाल के आने वाले विधानसभा चुनाव को फतह करना चाहती है। यही वजह है कि हिंदू प्रवासियों को अपने साथ जोड़े रखने के लिए केंद्र सरकार ने आनन-फानन में संसद के दोनों सदनों से नागरिकता संशोधन विधेयक, 2019 पारित करवा लिया।

नागरिकता संशोधन कानून में अफगानिस्तान, पाकिस्तान और बांग्लादेश से साल 2014 तक आए हिंदू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी और ईसाई धर्म के सभी अवैध प्रवासियों को नागरिकता देने का प्रावधान है, सिवाय मुसलमानों के। यही बात इस कानून के विरोध की सबसे बड़ी वजह है। देश का संविधान सभी भारतीयों के लिए नागरिकता के अधिकार की गारंटी देता है, चाहे उनका धर्म, जाति, भाषा, संस्कृति, लिंग या पेशा कुछ भी हो। नागरिकता संशोधन विधेयक लोगों के इस अधिकार को खत्म करता है। धर्म के आधार पर किसी की नागरिकता तय करने का अर्थ है, देश के संविधान को नकारना। जबकि देश की ताकत एक धर्मनिरपेक्ष लोकतंत्र है, जिसका अहम पहलू अल्पसंख्यक समुदायों के अधिकारों की रक्षा करना है। नागरिकता संशोधन कानून के अलावा

देश के नागरिकों की सबसे बड़ी चिंता एनआरसी को लेकर भी है। एनआरसी का प्रयोग, असम में पूरी तरह से विफल होने के बाद भी, सरकार ने कोई सबक नहीं सीखा है और अब वह एनआरसी को सारे देश में लागू करना चाहती है। इस बात का इरादा उसने सड़क से लेकर संसद तक में जाहिर किया है। एक ओर बार-बार यह कहा जा रहा है एनआरसी लागू होकर रहेगा, तो दूसरी ओर प्रधानमंत्री ने स्पष्ट रूप से कहा है कि इस संबंध में कैबिनेट में कोई चर्चा तक नहीं हुई है। विपक्ष एनआरसी को लेकर लोगों में भ्रम फैला रहा है, उन्हें डरा रहा है। नागरिक संशोधन कानून का भारतीय मुसलमानों से कोई लेना-देना नहीं है। ऐसे में एनआरसी भ्रम और भय की जो स्थिति बनाई जा रही है, उससे लोग गुस्से में हैं।

असम की मिसाल सबके सामने है। एनआरसी को लेकर पिछले पांच साल में राज्य में जो अफरा-तफरी मची, उसने सभी को परेशान करके रख दिया। अपने आप को भारतीय साबित करने के लिए लोगों को क्या-क्या जतन नहीं करने पड़ रहे? राज्य की पूरी प्रशासनिक मशीनरी इस कवायद में उलझी रही। इतना समय और अरबों रुपए खर्च करने के बाद जब अंतिम मसौदा सामने आया, तो उसमें लाखों वास्तविक भारतीय इस सूची से बाहर हो गए। इनमें बड़ी संख्या में असम में रह रहे हिंदीभाषियों के नाम भी शामिल नहीं थे। जिन लाखों लोगों के नाम छूटे, उनमें असम की पहली महिला मुख्यमंत्री सैयदा अनवरा तैमूर, पूर्व राष्ट्रपति फखरुद्दीन अली अहमद के रिश्तेदार, साहित्य अकादमी पुरस्कार विजेता दुर्गा खाटीवाड़ा और असम आंदोलन की पहली महिला शहीद बजयंती देवी के परिवार के सदस्य, स्वतंत्रता सेनानी छबीलाल उपाध्याय की प्रपौत्री मंजू देवी सहित अनेक नामी-गिरामी हस्तियां हैं। जिन भारतीयों के नाम इसमें शामिल नहीं हैं, उनमें बिहार, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल से आकर असम में बसने वालों की संख्या ज्यादा है। ऐसे भी लोग हैं जिनके पास आधार कार्ड, पासपोर्ट आदि जरूरी दस्तावेज हैं, लेकिन उनका नाम इसमें नहीं है। विदेशी न्यायाधिकरण ने इनका नाम जबरन निष्कासन सूची में डाल दिया है। कुछ मामले ऐसे भी सामने आए, जिनमें विदेशी अधिकरण ने कुछ लोगों को महज इसलिए विदेशी घोषित कर दिया कि उनका नाम एनआरसी में तो था, लेकिन वे या उसका कोई प्रतिनिधि अधिकरण के सामने पेश नहीं हुआ था।

अभी तक यह स्पष्ट नहीं है कि एनआरसी के तहत देश के नागरिक के रूप में पुष्टि के लिए कौन-कौनसे दस्तावेज वैध माने जाएंगे। अभी तक जो बात सामने आई है, उसके मुताबिक लोगों को करीब एक दर्जन दस्तावेज देने होंगे। ऐसे में एक गरीब एवं अनपढ़ व्यक्ति ऐसी जटिलताओं से कैसे निपटेगा, यह बड़ा सवाल है। सरकार ने अवैध घुसपैठियों एवं शरणार्थियों की पहचान के लिए क्या मापदंड तैयार किए गए हैं? यही वह वजह है, जिससे देश का हर नागरिक डरा हुआ है, खासतौर से दलित, आदिवासी और अल्पसंख्यक समुदाय। उन्हें डर है कि नागरिकता साबित करने की आड़ में कहीं उनके साथ भेदभाव तो नहीं किया जाएगा। उनके संवैधानिक अधिकार, तो प्रभावित नहीं होंगे, क्योंकि एनआरसी में नाम न होने की वजह से उन लोगों के नागरिक अधिकार, संपत्ति और तमाम सरकारी लाभ आदि एक झटके में छिन जाएंगे। जबकि अवैध आप्रवासियों को नागरिक संशोधन कानून भारत की नागरिकता प्रदान कर देगा।

समूह का सुख

गिरीश पंकज

दुनिया मेरे आगे

मेरा ही क्या, अनेक लोगों का यही अनुभव होगा कि अकेले में अकसर निराशा का भाव जन्म लेने लगता है। लेकिन समूह में रहने से मन में जीवंतता बनी रहती है। यह और बात है कि साधना या सृजन-कर्म के लिए आमतौर पर एकांत ही अनुकूल होता है। लेकिन मैं सामान्य स्थितियों की बात कर रहा हूं। मैंने कुछ लोगों को देखा और महसूस किया है कि अकेले में वे कुछ-कुछ उदास ही रहते हैं। मगर जब कुछ मित्रों या परिचितों के साथ होते हैं, तो चेहरे पर प्रसन्नता की तितली मंडराने लगती है। एकाकी-जीवन मनुष्य को कुछ कुछ वीतरागी किस्म का बना देता है। जबकि समूह में व्यक्ति सांसारिकता से जुड़ा रहता है। हताश-निराश व्यक्ति अगर अकेला रहे तो उसके मन में न जाने कैसे-कैसे गलत या निराशाजनक विचार उमड़ने लगते हैं! किसी प्रतियोगिता या परीक्षा में विफल विद्यार्थी को अकेले नहीं रहने देना चाहिए। अकेले में हताशा में वह गलत कदम भी उठा सकता है।

मेरे एक मित्र जब सेवानिवृत्त हुए तो उन्हें लगा कि अब जीवन में कुछ खास करने को नहीं रहा। वे निराशा के भंवर में डूबने-उतराने लगे। घर पर ही रहते। धीरे-धीरे वे अपने पुराने मित्रों से भी कटने लगे। यहां तक कि घर के सदस्यों के साथ भी घुलना- मिलना कम कर दिया। नतीजतन वे अवसाद में जाने लगे। आखिर वही हुआ, जिसकी आशंका थी। वे बीमार रहने लगे और हृदय रोगी बन कर एक दिन बिस्तर पकड़ लिया। फिर कुछ दिनों बाद ही वे संसार से कूच कर गए। मन में उत्साह कायम रहता तो शायद ठीक-ठाक जीवन जी लेते, मगर लोगों से कट कर जीवन को अनुपयोगी समझ कर हताश होना भारी पड़ गया। जबकि उनके साथ ही सेवानिवृत्त हुए एक अन्य मित्र स्वस्थ और सानंद जीवन जी रहे हैं, क्योंकि उन्होंने जीवन को रसमय बना लिया है। सुबह से शाम तक खुद को सामाजिक गतिविधियों में कुछ ऐसा व्यस्त किया कि वे अनेक लोगों की जरूरत बन गए। वरिष्ठ नागरिकों के समूह में तो उनका नियमित रूप से जाना होता है और वहां वे देश-दुनिया की चर्चा करते हैं और मगन रहते हैं। पहले वाले मित्र भी शुरू-शुरू में वरिष्ठ नागरिकों के उस फोरम में आते थे, पर कुछ दिनों के बाद आना ही बंद कर दिया।

कुछ लोग फितरत से अंतमुर्खी होते हैं। ऐसे लोग सबसे मिलना-जुलना पसंद नहीं करते। यह कोई अच्छी आदत नहीं, पर इसे भी कुछ लोग गर्व से बताते हैं कि मैं तो किसी से ज्यादा मिलता-जुलता नहीं। मैं आश्चर्यचकित हो जाता हूं कि कुछ लेखक भी अकेले रह कर कैसे सामूहिकता का बोध कर पाते हैं और कैसे आम जीवन की संवेदना को महसूस करके लिपिबद्ध भी कर लेते हैं। सामूहिकता से कट कर किया गया सृजन निष्प्राण होता है। उसमें अनुभव की कमी के कारण पठनीयता नहीं बन पाती। जैसी अकेले रहने के आदी व्यक्ति के जीवन से सरसता खत्म होती चली जाती है। पहले वाले मित्र आमतौर पर अकेले ही रहते थे. अपने कमरे में कैद। आत्मबंदी हों गोया। मित्रों ने उन्हें अक्सर समझाया कि आओ, बैठो। देश-दुनिया की चर्चा करो। हंसी-मजाक करो। सबके साथ रहो। मन में जो भावनाएं उमड़ रहीं हैं, उन्हें दूसरों से साझा करो। यही तो सामाजिकता है। लेकिन वे किसी की नहीं सुनते थे। न जाने क्यों उन्हें एकाकी जीवन ही रास आने लग गया था।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। इस नाते उसका यह दायित्व है कि वह समाज से जुड़ा रहे। समाज से कट कर, एक कमरे में सिमट कर आखिर हम क्या साबित करना चाहते हैं? तब तो बात समझ में आती है कि हमें कुछ एकांत चाहिए, लेकिन हम कुछ नहीं कर रहे होते, फिर भी एकांत में चले जाना चाहते हैं। इसका मतलब यह है कि हम कहीं न नहीं किसी मुद्दे को लेकर तनाव या अवसाद ग्रस्त हैं। अवसाद से उबरने का सबसे सटीक फार्मूला यही है कि हम समूह में रहें। समूह में रह कर हम जीवन को प्रफुल्लित और उत्साहजनक बना सकते हैं। बीमार व्यक्ति भी समूह में आकर बीमारी से मुक्त होने लगता है। सामूहिक होना एक तरह से सुरक्षित होना भी है।

रात-बिरात अगर कोई लड़की अकेले कहीं जा रही है तो वह असुरक्षित हो सकती है। लेकिन उसके साथ तीन-चार लड़कियां हैं, तो वह हर हाल में सुरक्षित है। इसलिए हमेशा सामूहिकता की ताकत को समझना होगा। ग्रामीण क्षेत्रों में तो आजकल 'महिला स्व सहायता समूह' बन रहे हैं। इसके सहारे कुछ महिलाएं पर्याप्त धन अर्जन भी कर रही हैं। अकेले काम करना और कुछ लोगों के साथ मिल कर काम करना, इसमें काफी फर्क आ जाता है। कोई बच्चा कमरे में अकेले पड़ा रहे तो वह उस फूल की तरह मुरझा जाता है, जिसे सींचा नहीं जाता। लेकिन जैसे ही वह मित्रों के साथ खेलने-कूदने लगता है तो इतने कितना प्रफुल्लित होकर घर लौटता है! मतलब यह कि सामूहिकता ऐसा जल है जो हमारे अंतर के हृदय सुमन को सदैव संचित करता रहता है। उसे मुरझाने नहीं देता। समूह में रह कर उसके सुख को वही समझ सकता है, जो सामूहिकता को जीता है।

सबका त्योहार

हमारा देश दुनिया का सबसे बड़ा धर्मनिरपेक्ष देश है। यहां हर धर्म के त्योहार को हर धर्म के लोग मनाते हैं। हर धर्म और हर धर्म के त्योहार-पर्व हर धर्म के लोगों को इंसानियत और सबका सम्मान करने की शिक्षा देते हैं। क्रिसमस ईसा मसीह (यीशु) के जन्मदिवस के उपलक्ष्य पर मनाया जाता है। यह सारी दुनिया में बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। ईसा मसीह ने अपने उपदेशों 'सुसमाचार' में दुनिया को इंसानियत का संदेश दिया है। आज जिस तरह समूची दुनिया में वैर-विरोध, हेराफेरी, बेईमानी, नफरत, हिंसा आदि दुनिया को पतन की ओर ले जानी वाली कुरीतियां बढ़ रही हैं।

अगर दुनिया का हर इंसान अच्छी राह पर चलना शुरू कर देगा तो दुनियां में फैली सभी कुरीतियों का खात्मा हो जाएगा और दुनिया जमीन पर ही स्वर्ग बन जाएगी। विश्वास है कि क्रिसमस वाले दिन ही सांता क्लॉज अपनी झोली में बच्चों के लिए तोहफे लेकर आता है। यह हर कोई अपने बच्चों को बताता है। लेकिन इसके साथ सभी अपने बच्चों को यह बताएं कि सांता क्लॉज सबको यह संदेश देता है कि जिंदगी में कभी गलत रास्ते पर न चलें। न बेईमानी, हेराफेरी करें और न ही कोई अनैतिक काम करें तो इससे बच्चों के कोमल मन में अच्छी बातें घर करेंगी। त्योहार कोई भी क्यों न हो, किसी भी धर्म से संबंधित क्यों न हो, उसे मनाने के साथ उसके इतिहास और उसकी शिक्षा का अनुसरण भी हर किसी को करना चाहिए।

● *राजेश कुमार चौहान, जालंधर*

आग का दायरा

दिल्ली के अनाज मंडी इलाके में हुए भयानक अग्निकांड की त्रासदी अभी शांत भी नहीं पड़ी थी कि सोमवार तड़के महानगर के किराड़ी इलाके में कपड़े की गोदाम में लगी आग ने नौ लोगों की जिंदगी छीन ली। दूसरी घटनाओं की तरह इस घटना में भी आग की वजह शॉर्ट सर्किट बताया जा रहा है। दिल्ली में शॉर्ट सक्रिट की वजह से कई घटनाएं हो चुकी हैं। कुछ समय पहले जामिया इलाके में इसी वजह से लगी आग में छह लोगों, तो अर्पित होटल में लगी आग में सत्रह लोगों को काल का ग्रास होना पड़ा था। आंकड़े बताते हैं कि 2017-2018 में 29,423 दुर्घटनाएं हुई थीं, जिनमें 1267 लोग घायल हुए और 318 लोगों को अपनी जान गंवानी पड़ी। दिल्ली में हर महीने इस तरह की घटना होती रहती है, लेकिन जिम्मेदार संबंधित महकमे और अधिकारी अपनी आंखें मूंदे रखते हैं। दिल्ली में आग की एक मुख्य कारण यह भी है जो हर बार सामने आते हैं। संकरी गलियां, जिसके कारण अग्निशामक गाड़ियां वहां या तो नहीं पहुंच पाती हैं या फिर उन्हें काफी मशक्कत करनी पड़ती है। दूसरी बड़ी वजह यह है कि चारों तरफ बिजली के तार का जंजाल लगा होना। लेकिन न तो जिम्मेदार सुध लेते है और न ही आम लोग। जरूरी है कि नगर निगम और सरकार हादसों पर लगाम लगाने पर काम करें।

● *गौतम, एमसीयू, खंडवा कैंपस*

बदलता दौर

जैसे-जैसे युग बदला है, मनुष्य की सोच में भी बदलाव आया है। आज दुनिया पहले की अपेक्षा बिल्कुल बदल चुकी है। लोग फैशन के पीछे भाग रहे हैं और संसाधनों या सुविधाओं की वजह से बहुत आलसी भी हो गए हैं। वे ज्यादातर काम खुद से नहीं करते हैं और हाथ की जगह मशीन का इस्तेमाल करते हैं। लेकिन पहले के जमाने में लोग हाथ से काम करते थे। आज के जमाने में उसी काम के लिए मशीन का इस्तेमाल करते हैं।

हालांकि पहले जमाने के लोग स्वस्थ रहते थे और आज लोगों को उतनी ताकत नहीं है। ताकत इसलिए नहीं है कि लोग मशीन पर निर्भर करने लगे हैं। सुविधाओं का लाभ उठाना अलग बात है, लेकिन लोग जरूरी मेहनत भी नहीं करते हैं तो कैसे रहेंगे स्वस्थ। जिस तरह से युग में बदलाव आ रहा है, उससे तो यही लगता है कि लोग शायद खाना भी मशीन से खाने लगेंगे। लोग और भी कमजोर हो सकते हैं। जब हम सब 2019 में जिंदगी गुजार रहे थे तो यह दुनिया चांद पर पहुंच गई थी। अब देखना है कि 2020 में क्या-क्या तकनीकी खोजें होती हैं और लोगों को शारीरिक मेहनत से कितनी दूर करती है।

● *मो जमील, मधुबनी, बिहार*

हरित विकास

हाल ही में 'कॉप 25' में एक बार फिर कुछ खास नतीजे सामने नहीं आए और ऐसा पिछले पच्चीस सालों से हो रहा है। ग्लोबल वार्मिंग एक बहुआयामी और दूरगामी समस्या पैदा कर सकती है। यह जानते हुए कि खतरा सामने है, फिर भी हम हम कुछ नहीं कर रहे, सिवाए बात के अलावा। दरअसल, इसके निवारण के लिए कोई अकेला देश कुछ नहीं कर सकता, क्योंकि हम भूगोल और पर्यावरण को राजनीतिक सीमाओं में बांध कर नहीं रख सकते। इसलिए जरूरी है कि बहुआयामी रणनीति के माध्यम से मिल कर प्रयास किया जाए। ऐसी समस्या के पीछे एक कारण बहुत हद तक जिममेदार है, वह है जीडीपी आधारित प्रतिस्पर्धात्मक विकास, कि हमें इतने ट्रिलियन की अर्थव्यवस्था बनानी है और हमें इतना! इसी चक्कर में हम पर्यावरण को नजरअंदाज कर देते है, अब जरूरी है कि जीडीपी के बजाय 'ग्रीन जीडीपी' आधारित विकास पर ध्यान लगाया जाए, क्योंकि इससे बहुत जल्दी हम समस्या का समाधान पा सकते हैं। जब पूरा हमारा आधार ग्रीन जीडीपी आधारित आकलन हो जाएगा और इसमें सारे देश मिल जाएंगे, तब नए रास्ते निकलेंगे।

● *कुंदन वर्मा, बहराइच, उत्तर प्रदेश*

मुसीबत के वाहन

राष्ट्रीय हरित पंचाट यानी एनजीटी ने हाल ही में एक महत्त्वपूर्ण मुद्दे की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। उसने दिल्ली सहित देश के 122 शहरों के अधिकारियों से आग्रह किया है कि वे वाहनों के पंजीकरण में कमी लाएं। यह वे शहर हैं, जहां के वायुमंडल में प्रदूषण का सर्वोच्च स्तर पाया गया है और पार्किंग की समस्या भी विकराल रूप धारण कर चुकी है। एनजीटी ने इन शहरों में सार्वजनिक परिवहन के साधनों को बेहतर बनाने की भी अपील की है। इस धरा पर जगह तो उतनी की उतनी है, पर वाहनों की संख्या में दिन-प्रतिदिन इजाफा होता जा रहा है। इसलिए परिवहन के साधनों को रखने के लिए जगह की मारामारी उत्तरोत्तर विकट होती जा रही है। ट्रैफिक जाम की समस्या से भी महानगर और राष्ट्रीय राजमार्ग पहले से ही जूझ रहे हैं। प्रदूषण की समस्या तो अपनी जगह यथावत है ही। इसलिए यह अंतहीन सिलसिला कहां पर जाकर थमेगा, कह पाना मुश्किल है।

● *ललित महालकरी, इंदौर*

चौपाल

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com

www.readwhere.com